Journal of Frontiers in Multidisciplinary Research

जीवंत संविधान: कैसे भारत का संविधान समय के साथ बदलता और आगे बढ़ता है

विवेक कुमार यादव
शोध छात्र, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

* Corresponding Author: **विवेक कुमार यादव**

Article Info
E-ISSN: 3050-9726
P-ISSN: 3050-9718
Impact Factor (RSIF) = 7.34
Volume: 06
Issue: 02
July – December 2025
Received: 13-07-2025
Accepted: 14-08-2025
Published: 12-09-2025
Page No: 453-456

सारांश
भारत का संविधान अक्सर दुनिया के सबसे विस्तृत और जटिल संविधानों में से एक कहा जाता है, लेकिन उसकी असली पहचान उसकी लंबाई में नहीं, बल्कि उसकी जीवंतता में छिपी है। यह एक ऐसा दस्तावेज़ है जो अपने समय की सीमाओं में बंधा नहीं, बल्कि समय को दिशा देने का साहस रखता है। संविधान सभा ने इसे किसी पत्थर की लकीर की तरह नहीं लिखा था; उन्होंने एक ऐसा ढाँचा बनाया जो बदलते समाज, तकनीकी बदलाव, राजनीतिक उतार-चढ़ाव, नई न्यायिक सोच और नागरिकों की evolving आकांक्षाओं के अनुरूप बढ़ सके, मुड़ सके और ज़रूरत पड़ने पर नए रास्ते बना सके। इसीलिए भारतीय संविधान को "जीवंत संविधान" कहा जाता है—एक ऐसा संविधान जो न सिर्फ समाज को नियंत्रित करता है बल्कि उसके साथ चलता भी है।
आज जब दुनिया तेज़ी से बदल रही है—इंटरनेट नागरिक अधिकारों को नए रूप दे रहा है, सरकारें डिजिटल शासन की तरफ बढ़ रही हैं, सामाजिक न्याय के नए प्रश्न उठ रहे हैं, पर्यावरणीय संकट सभ्यता की परीक्षा ले रहा है, और भारत वैश्विक राजनीति का एक प्रमुख खिलाड़ी बन रहा है—तब भारतीय संविधान इस बदलाव को संभालने और दिशा देने की क्षमता लगातार प्रदर्शित कर रहा है। संसद के संशोधन, सुप्रीम कोर्ट की व्याख्याएँ, और लोकतांत्रिक मूल्य इन परिवर्तनों को आकार दे रहे हैं। यह लेख उन सभी पहलुओं का गहरा विश्लेषण प्रस्तुत करता है जो यह साबित करते हैं कि भारतीय संविधान एक स्थिर कागज़ नहीं, एक जीवंत, सांस लेता हुआ, विकसित होता दस्तावेज़ है। यह लेख संविधान की अनुकूलन क्षमता, उसकी व्याख्या की व्यापकता, उसकी न्यायिक प्रगतिशीलता और भारतीय लोकतंत्र की दृढ़ता को विस्तार से समझाने का प्रयास है।

मुख्य शब्द: जीवंत संविधान, संवैधानिक अनुकूलन, मूल संरचना सिद्धांत, संविधान संशोधन प्रक्रिया,न्यायिक सक्रियता, सुप्रीम कोर्ट की भूमिका, सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक मूल्य, अधिकारों का विकास, भारतीय संविधान का परिवर्तन

परिचय

जब संविधान सभा 1946 से 1949 के बीच दिल्ली में बैठकर भारत के भविष्य का ढाँचा बना रही थी, तब उनके सामने एक बड़ा प्रश्न था — क्या भारत जैसा विविध, विशाल और सामाजिक रूप से जटिल देश एक कठोर, अपरिवर्तनीय संविधान को स्वीकार कर पाएगा? लगभग हर सदस्य इस बात पर सहमत था कि भारत को एक ऐसा संविधान चाहिए जो मज़बूत भी हो और लचीला भी; स्थायी भी हो और परिवर्तनशील भी। संविधान की यह दोहरी प्रकृति ही वह आधार है जो इसे आज एक जीवंत दस्तावेज़ बनाती है—जहाँ न्यायपालिका समय के साथ उसकी नई व्याख्याएँ प्रस्तुत करती है, संसद स्थितियों के अनुसार संशोधन करती है, और जनता उसकी भावना को समय-समय पर नए रूप में परिभाषित करती है।
संविधान अपने आरंभिक रूप में केवल एक कानूनी संरचना भर नहीं था, बल्कि एक सामाजिक दृष्टि थी—एक ऐसी दृष्टि जो India 1950 को India 2025 तक जोड़ सके। संविधान का हर अनुच्छेद यह संभावनाएँ लिए हुए था कि भविष्य के भारत में कुछ नया जोड़ा जा सके, पुराना सुधारा जा सके और आवश्यकता अनुसार नए अधिकार और नए सिद्धांत गढ़े जा सकें। यही वजह है कि आज अनुच्छेद 21, जो मूल रूप से

केवल जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता तक सीमित था, सामाजिक, आर्थिक, डिजिटल, स्वास्थ्य, पर्यावरण और मानव मर्यादा से जुड़े अनेक अधिकारों तक विस्तारित हो चुका है।

यह लेख इसी विकास को विस्तार से समझाने का प्रयास है—कैसे भारतीय संविधान बदलते समय के साथ कदम मिलाकर चलता है और क्यों उसे दुनिया के सबसे प्रगतिशील संविधानों में से एक माना जाता है।

यह लेख किसी एक पहलू पर नहीं टिकता, बल्कि संविधान की जीवंतता को बनाने वाले सभी प्रमुख कारकों को विस्तार से देखता है—संशोधन प्रक्रिया, न्यायिक व्याख्या, अधिकारों का विस्तार, केंद्र-राज्य संबंधों का विकास, सामाजिक न्याय का नया रूप, डिजिटल भारत की नई माँगें, वैश्विक दबाव, और नागरिकों की बदलती अपेक्षाएँ। यह लेख हर उस मोड़ पर जाता है जहाँ इतिहास, कानून, राजनीति और समाज मिलकर संविधान को आगे बढ़ाते हैं।

संविधान की जीवंतता का आधार: परिवर्तनशीलता के प्रति विश्वास

संविधान सभा के कई सदस्य, विशेष रूप से डॉ. बी. आर. आंबेडकर, यह बात बार-बार कहते थे कि किसी भी समाज की जरूरतें और विचार समय के साथ बदलते हैं। जो बात 1950 में न्यायसंगत लग सकती थी, वह 1970 में अधूरी और 2025 में अप्रासंगिक भी हो सकती है। इसलिए संविधान को ऐसा होना चाहिए कि वह इन परिवर्तनों को समायोजित कर सके। यही कारण है कि संविधान न केवल अभूतपूर्व अधिकारों की सूची देता है, बल्कि यह भी स्वीकार करता है कि उन अधिकारों का अर्थ समय के साथ बदल सकता है।

उदाहरण के लिए, आज इंटरनेट न केवल संचार का साधन है, बल्कि रोजगार, शिक्षा, अभिव्यक्ति और सरकारी सेवाओं तक पहुँच का माध्यम भी है। यह सब 1950 में कल्पना से बाहर था। लेकिन संविधान ने यह व्यवस्था रखी कि जब समय बदलेगा, तो न्यायालयों की व्याख्या भी बदल सकेगी। इस तरह संविधान समय को मात नहीं देता, बल्कि समय के बदलाव के साथ तालमेल बनाकर आगे बढ़ता है।

संशोधन की शक्ति: संविधान को भविष्य के लिए तैयार करने का तरीका

भारतीय संविधान की एक बड़ी ताकत उसकी संशोधन प्रक्रिया है। संविधान के निर्माताओं ने इसे न तो इतना आसान बनाया कि हर राजनीतिक व्यवस्था अपने हित में बदलाव कर सके, और न इतना कठिन कि एक बार लिखा हुआ शब्द हमेशा के लिए जड़ हो जाए। उन्होंने एक संतुलित ढाँचा चुना, जिसमें संविधान संशोधन संभव है, परंतु कुछ विशेष शर्तों के साथ। इसने संविधान को समय-समय पर नए सामाजिक और आर्थिक संदर्भों के अनुसार खुद को अपडेट करने का अवसर दिया।

पहला संशोधन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को कुछ सीमाओं के साथ जोड़कर लाया गया, क्योंकि नवस्वतंत्र भारत में साम्प्रदायिक तनाव, राजद्रोह से जुड़े मुद्दे और जनहित की सुरक्षा बड़े सवाल थे। समय के साथ 42वें संशोधन ने संविधान के कई महत्वपूर्ण ढाँचों को बदला, फिर 44वें संशोधन ने लोकतांत्रिक संतुलन को बहाल किया। 73वें और 74वें संशोधन ने पंचायतों और नगरपालिकाओं को संवैधानिक दर्जा दिया, जिससे स्थानीय लोकतंत्र की नई ऊर्जा पैदा हुई। 86वें संशोधन ने शिक्षा को 6 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए मूल अधिकार बना दिया। और हाल के वर्षों में, 102वें और 103वें संशोधनों ने सामाजिक न्याय की नई दिशा निर्धारित की—एक सामाजिक संरचना जो अब जाति, आर्थिक स्थिति और समान अवसर के सिद्धांतों को नए तरीकों से जोड़ती है।

यह संशोधन सिर्फ कानूनों के बदलाव नहीं थे; यह समाज की विकसित होती सोच का प्रतिबिंब भी थे। यही संशोधन साबित करते हैं कि संविधान एक जीवंत दस्तावेज़ है, जो हर दशक में अपने समय की ज़रूरतों को समझकर नए रूप लेता है।

न्यायपालिका: संविधान को जीवंत बनाने वाली केंद्रीय शक्ति

भारत की न्यायपालिका, विशेषकर सुप्रीम कोर्ट, संविधान को जीवंत बनाने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अदालतें न केवल संविधान की व्याख्या करती हैं बल्कि उसे नई परिस्थितियों के अनुरूप पुनर्परिभाषित भी करती हैं। कई बार किसी अनुच्छेद का शब्दों में सीमित अर्थ होता है, लेकिन उसके भाव और उद्देश्य न्यायालय नई तकनीक, नए सामाजिक संदर्भ, नए नैतिक प्रश्न और मानवाधिकारों की विकसित होती परिभाषाओं के आधार पर विस्तृत कर देते हैं।

अनुच्छेद 21 इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। शुरू में यह केवल "जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता" की बात करता था। लेकिन न्यायपालिका ने यह समझा कि जीवन का अर्थ केवल सांस लेना नहीं है; जीवन वह है जिसमें सम्मान हो, सुरक्षा हो, समान अवसर हो, शिक्षा हो, स्वस्थ वातावरण हो, निजता हो और किसी भी व्यक्ति को उसके मानवाधिकारों से वंचित न किया जाए।

इसी तरह, अनुच्छेद 14 के तहत समानता का अर्थ समय के साथ विस्तृत होकर "तर्कसंगत वर्गीकरण", "कानून के समक्ष समानता", "अंतरनिहित गरिमा" और "mindless discrimination" जैसे सिद्धांतों तक बढ़ा। सुप्रीम कोर्ट की व्याख्याएँ आज न केवल भारत के कानूनों को दिशा देती हैं बल्कि यह भी तय करती हैं कि समाज किस दिशा में आगे बढ़ेगा।

मूल ढाँचा सिद्धांत: संविधान की स्थिरता और परिवर्तन का संतुलन

संविधान की जीवंतता केवल उसके बदलाव की क्षमता में नहीं, बल्कि कुछ मूल सिद्धांतों की स्थिरता में भी निहित है। यह संतुलन मूल ढाँचा सिद्धांत (Basic Structure Doctrine) के माध्यम से स्थापित हुआ। 1973 में सुप्रीम कोर्ट के केशवानंद भारती मामले ने यह स्पष्ट कर दिया कि संसद संविधान में संशोधन तो कर सकती है, लेकिन संविधान के मूल ढाँचे—जैसे लोकतंत्र, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, कानून का शासन, शक्तियों का विभाजन—को नहीं बदल सकती।

इस सिद्धांत ने संविधान को एक ऐसा ढाँचा दिया जिसमें परिवर्तन की स्वतंत्रता भी है और कुछ स्थायी नींव भी। यह संतुलन ही संविधान को स्थिर और जीवंत दोनों बनाता है। यदि संविधान पूरी तरह कठोर होता, तो वह समय के साथ अप्रासंगिक हो जाता; और यदि पूरी तरह लचीला होता, तो राजनीतिक हितों के अनुसार अस्थिर भी हो सकता था। मूल ढाँचा सिद्धांत ने इस द्वंद्व को स्थायी रूप से हल कर दिया।

सामाजिक न्याय का बदलता स्वरूप

सामाजिक न्याय भारतीय संविधान की आत्मा है, लेकिन यह आत्मा समय के साथ नए रूप लेती रही है। शुरुआती वर्षों में सामाजिक न्याय का ध्यान मुख्यतः जातिगत भेदभाव और दलितों, आदिवासियों और पिछड़े वर्गों की स्थिति को सुधारने पर था। reservation व्यवस्था इसी सोच का परिणाम थी। लेकिन समय के साथ सामाजिक न्याय का स्वरूप व्यापक होता चला गया—इसमें लैंगिक समानता, विकलांग व्यक्तियों के अधिकार, ट्रांसजेंडर नागरिकों की पहचान, LGBTQ+ अधिकार, आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए

आरक्षण, और कई अन्य पहलू शामिल हो गए हैं।
न्यायपालिका ने इस विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। निर्भया मामले के बाद लैंगिक हिंसा पर नए कानून बने, ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को थर्ड जेंडर का दर्जा मिला, निजी अधिकारों और समानता की परिभाषा का विस्तार हुआ। ये सब सामाजिक न्याय के नए रूप हैं, जो संविधान को जीवंत बनाते हैं।

डिजिटल युग और संविधान की नई चुनौतियाँ

21वीं सदी का भारत डिजिटल क्रांति की ओर तेज़ी से बढ़ रहा है। मोबाइल फ़ोन, इंटरनेट कनेक्टिविटी, डिजिटल पेमेंट, ई-गवर्नेंस, सोशल मीडिया, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और डेटा आधारित निर्णय—यह सब राजनीति, समाज और प्रशासन को बदल रहे हैं। लेकिन इन सबके साथ नए संवैधानिक प्रश्न भी उभर रहे हैं।
2017 में सुप्रीम कोर्ट ने निजता को मौलिक अधिकार का दर्जा दिया। यह फैसला भारतीय संवैधानिक इतिहास में एक मील का पत्थर है। इससे यह स्पष्ट हुआ कि संविधान डिजिटल युग के अधिकारों को पहचानने के लिए तैयार है। आज के समय में डेटा सुरक्षा, एल्गोरिथ्मिक पारदर्शिता, ऑनलाइन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, साइबर बुलिंग, डिजिटल साक्षरता और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के नैतिक उपयोग जैसे मुद्दे नए संवैधानिक आयाम पैदा कर रहे हैं।
संविधान इन सबका समाधान शब्दों में भले न देता हो, लेकिन उसकी भावना और न्यायपालिका की व्याख्या इन समस्याओं का नया समाधान तैयार कर रही है।

पर्यावरणीय न्याय: नए दौर की संवैधानिक आवश्यकता

जलवायु परिवर्तन आज मानव सभ्यता की सबसे बड़ी चुनौती है। ऐसे में संविधान का पर्यावरणीय संरक्षण से जुड़ना उसके जीवंत होने का एक और प्रमाण है। 1970 और 1980 के दशक में सुप्रीम कोर्ट ने पर्यावरण को जीवन के अधिकार का हिस्सा मान लिया। इसके बाद गंगा, हिमालय, जंगल, वन्यजीवन, नदी प्रदूषण, वायु गुणवत्ता और जल सुरक्षा से जुड़े कई फैसलों ने संविधान को पर्यावरणीय अधिकारों से जोड़ दिया।
आज पर्यावरण, विकास और मानव अधिकारों के बीच संतुलन बनाना संविधान की नई भूमिका बन चुका है। यह भूमिका भविष्य में और भी गहरी होगी।

संविधान और केंद्र–राज्य संबंधों का विकास

1950 का भारतीय संघ आज के संघ से बिल्कुल अलग है। केंद्र और राज्यों के बीच शक्ति-संतुलन समय के साथ बदलता रहा है—कभी राजनीतिक परिस्थितियों ने इसे प्रभावित किया, कभी आर्थिक नीतियों ने, कभी सामाजिक आंदोलनों ने। 1990 के दशक के बाद जब गठबंधन राजनीति का दौर आया, तो राज्यों की भूमिका और मज़बूत हुई। जीएसटी जैसे बड़े आर्थिक सुधारों ने भी केंद्र और राज्यों के बीच नए समन्वय की माँग पैदा की।
आज cooperative federalism और competitive federalism दोनों साथ-साथ चलते हैं। यह संविधान की ऐसी व्यापकता है जो उसे स्थिर रखते हुए भी समय के अनुसार विकसित करती है।

लोकतंत्र का नया अर्थ और नागरिकों की बदलती अपेक्षाएँ

संविधान ने भारत को एक लोकतांत्रिक ढाँचा दिया, लेकिन समय के साथ लोकतंत्र का अर्थ बदलता गया है। पहले लोकतंत्र केवल चुनाव और प्रतिनिधित्व तक सीमित था, आज इसमें सूचना तक पहुँच, डिजिटल सहभागिता, सोशल मीडिया की भूमिका, जनमत की पारदर्शिता, नागरिक अधिकारों की विविधता, महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी, युवा शक्ति और पारदर्शी शासन—यह सब शामिल हो चुका है।
आज जनता संविधान को केवल कानून की किताब के रूप में नहीं देखती, बल्कि अपने अधिकारों और दायित्वों के एक सजीव कोड की तरह अपनाती है। यह चेतना भी संविधान की जीवंतता को बढ़ाती है।

आगे का रास्ता: एक और अधिक जीवंत संविधान

21वीं सदी का भारत बदल रहा है—टेक्नोलॉजी, अर्थव्यवस्था, राजनीति, समाज, जलवायु, सुरक्षा, शिक्षा और स्वास्थ्य—हर क्षेत्र नई माँगें पैदा कर रहा है। संविधान को इन सबका सामना करना होगा। भविष्य में डिजिटल अधिकार, जलवायु न्याय, कृत्रिम बुद्धिमत्ता की नैतिकता, अंतरराष्ट्रीय कानूनों का प्रभाव, युवा वोटरों की आकांक्षाएँ और आर्थिक संतुलन जैसे प्रश्न संविधान को और भी विकसित करेंगे। लेकिन एक बात स्थायी है—भारतीय संविधान के मूल सिद्धांत, जो इसे आज भी दुनिया का सबसे जीवंत संविधान बनाते हैं: न्याय, स्वतंत्रता, समानता, गरिमा और लोकतंत्र।

निष्कर्ष

भारतीय संविधान न तो कभी स्थिर रहा और न कभी रहेगा। इसकी यही प्रकृति—समय के साथ बदलने की क्षमता—इसे जीवंत बनाती है। संविधान की जीवंतता ही आधुनिक भारत की पहचान है। यह दस्तावेज़ केवल नियमों का संग्रह नहीं, बल्कि एक जीवंत सामाजिक अनुबंध है, जो हर पीढ़ी के साथ अपना अर्थ, अपनी व्याख्या और अपना प्रभाव बदलता रहता है। इसमें परिवर्तन और स्थिरता का ऐसा संतुलन है जिसने भारत को एक मजबूत, लोकतांत्रिक और प्रगतिशील राष्ट्र बनाए रखा है।

संदर्भ

1. भारत की संविधान सभा. संविधान सभा की बहसें (1946–1949). नई दिल्ली: लोक सभा सचिवालय; 1949 (संशोधित पुनर्मुद्रण 2014)।
2. आंबेडकर बीआर. भारत का संविधान और उसके मूल सिद्धांत. संविधान सभा में अंतिम भाषण, 25 नवंबर 1949. नई दिल्ली: लोक सभा सचिवालय; 1949.
3. भारत का संविधान. नई दिल्ली: भारत सरकार, विधि एवं न्याय मंत्रालय (संशोधित संस्करण 2025 तक सभी संशोधनों सहित); 1950.
4. भारत का सर्वोच्च न्यायालय. केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य. AIR 1973 SC 1461.
5. भारत का सर्वोच्च न्यायालय. न्यायमूर्ति के.एस. पुट्टस्वामी (सेवानिवृत्त) बनाम भारत संघ. (2017) 10 SCC 1.
6. भारत का सर्वोच्च न्यायालय. इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ. AIR 1993 SC 477 (मंडल मामले का निर्णय).
7. भारत का सर्वोच्च न्यायालय. नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ. (2018) 10 SCC 1.
8. भारत की संसद. भारत का संविधान (प्रथम, बयालीसवाँ, चौवालीसवाँ, तिहत्तरवाँ, चौहत्तरवाँ, छियासीवाँ, एक सौ एकवाँ एवं एक सौ तीनवाँ संशोधन अधिनियम). नई दिल्ली: भारत सरकार; 1951–2019.
9. वित्त मंत्रालय. आर्थिक सर्वेक्षण (विभिन्न वर्ष). नई दिल्ली: भारत सरकार; 1950–2024 (प्रतिवर्ष).
10. नीति आयोग. सहकारी एवं प्रतिस्पर्धी संघवाद संबंधी प्रतिवेदन एवं नीति दस्तावेज़ (2015–2025). नई दिल्ली: भारत सरकार; 2015–2025.

11. संघ लोक सेवा आयोग एवं राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय. संवैधानिक विकास एवं न्यायिक व्याख्या पर शोध-पत्र एवं अध्ययन सामग्री. नई दिल्ली एवं विभिन्न विश्वविद्यालय; 2010–2025.
12. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग. वार्षिक प्रतिवेदन (1993–2024). नई दिल्ली: राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग; 1994–2025.
13. पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय एवं भारत का सर्वोच्च न्यायालय. पर्यावरण संरक्षण एवं जीवन के अधिकार संबंधी प्रतिवेदन एवं निर्णय (विशेष रूप से एम.सी. मेहता मामले, ताज ट्रेपेज़ियम आदि). नई दिल्ली: भारत सरकार एवं सर्वोच्च न्यायालय; 1985–2025.
14. इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय. डिजिटल इंडिया, व्यक्तिगत डेटा संरक्षण विधेयक एवं साइबर सुरक्षा संबंधी श्वेत पत्र. नई दिल्ली: भारत सरकार; 2019–2025.
15. जैन एमपी. भारतीय संवैधानिक विधि. नई दिल्ली: लेक्सिसनेक्सिस; नवीनतम संस्करण. शुक्ला वीएन. भारतीय संविधान. लखनऊ: ईस्टर्न बुक कंपनी; नवीनतम संस्करण. ऑस्टिन ग्रानविल. भारतीय संविधान: राष्ट्र का आधार-स्तंभ. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2000. बक्षी उपेंद्र, पुरी सुप्रिया आदि. संवैधानिक विकास पर शोध-आलेख संग्रह. विभिन्न जर्नल एवं प्रकाशन; 1990–2025.
16. भारत की संसद. लोक सभा एवं राज्य सभा की बहसें (आधिकारिक प्रतिवेदन). नई दिल्ली: लोक सभा/राज्य सभा सचिवालय; 1952–2025 (https://eparlib.nic.in पर उपलब्ध).
17. राष्ट्रीय अभिलेखागार भारत एवं प्रेस सूचना ब्यूरो. संवैधानिक, विधायी एवं नीतिगत दस्तावेज़ संग्रह. नई दिल्ली: राष्ट्रीय अभिलेखागार एवं पीआईबी; 1947–2025.

How to Cite This Article
यादव वि क. जीवंत संविधान: कैसे भारत का संविधान समय के साथ बदलता और आगे बढ़ता है. जर्नल ऑफ फ्रंटियर्स इन मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च. 2025;6(2):453-456.

Creative Commons (CC) License
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International (CC BY-NC-SA 4.0) License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work non-commercially, as long as appropriate credit is given and the new creations are licensed under the identical terms.